International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

हिन्दी दलित नाटक

डॉ0 संतोष रानी,
Junior Lecturer, Govt. Girls Sr. Sec. School, Madina, Rohtak

भारतीय साहित्य में नाटक को पंचम वेद माना गया है। नाटक ही एक ऐसी विधा है जो जनमानस पर सीधे चोट करने के साथ–साथ उसे प्रभावित भी करती है और दिशा भी देती है। "नाटक साहित्य की शक्ति और सामर्थ्य को अपने आलेख में समाहित करने वाली वह विशिष्ट साहित्यिक विद्या है जिसकी अपार संभावनाओं का प्रमाण केवल दृश्य रूप में ही निहित रहता है। मूल आलेख में विद्यमान नाट्य व्यंजना की अनन्त संभवनाएं मंच पर जीवन धारण करती है।"[1]

शुरू से ही दलित समाज और नाट्य परम्परा का अत्यन्त घनिष्ट सम्बंध रहा है क्योंकि नाटक में काम करने वाले लगभग पात्रा दलित समाज से ही होते थे। दलित समाज और भारतीय नाट्य परम्परा के अन्तर्सम्बंध को प्रकट करते हुए डॉ0 एन0 सिंह लिखते है –

"भारत में नाट्य परम्परा बहुत पुरानी है। दलित समाज के लिए यह प्राचीनकाल में प्रतिबंधित थी। वेदों के पढ़ने और सुनने पर कठोर दण्ड की व्यवस्था थी। जिसकी परछाई से परहेज किया जाता है जो इन तथाकथित सभ्यजनों के लिए अंत्यज अछूत न जाने क्या–क्या है। उसके लिए साहित्य और समाज का यह सामपत्य बचा माने
रखता है? जो समाज गिना ही नहीं जाता भला साहित्य से उसका क्या हित हो सकता है? जो तथाकथित समाज चार वर्गों में आता ही नहीं बल्कि इससे इतर पाँचवे वर्ण में आता है फिर कैसे कहा जा सकता है कि यह पंचम वर्ण भी समाज का अंग है? यदि ऐसा ही होता तो भरतमुनि को पंचम वेद नाट्यशास्त्र लिखने की आवश्यकता ही क्यों पड़ती। मानो भरतमुनि कह रहे हो – अपने वेद अपने पास रखो तुम क्यों हमे प्रतिबंधित करोगे। हम खुद ही इसे घास नहीं डालते। हमारा वेद यह पंचम नाट्यशास्त्र है।"[2]

19वीं सदी के शुरू में कुछ संवादों या गीतों के माध्यम से समाज में आर्यसमाजियों ने छुआछूत के खिलाफ प्रचार किया। लेकिन इन नाटकों में वर्णव्यवस्था को समाज की आवश्यकता के रूप में दर्शाया गया। इसके बाद भी नाटककारों द्वारा दलित समस्या को आधार बनाकर दलित नाटक लिखने की परम्परा का सूत्रापात हुआ लेकिन ये नाटक प्रकाशित नहीं हो सके। "इस कड़ी में सबसे पहले 20वीं सदी के 'आदि हिन्दू आंदोलन' के प्रणेता स्वामी अछूतानंद 'हरिहर' जी के चार नाटक दृष्टिगोचर होते है जिनमें से दो प्रकाशित नहीं हो पाए। उनका पहला नाटक 'रामराज्य न्याय' में रामायण के उपेक्षित और राम के शिकार पात्रा शम्बूक की हत्या का वर्णन है। लोग हजारों की संख्या में इक्ट्ठे होकर इस नाटक को देखा करते थे। उनके नाटक 'शम्बूक', 'मायानंद बलिदान, 'पारख–पद', 'बलि छलन' हिन्दू शास्त्रों और वाड्.मय के ऐसे पात्रों पर रचे गए हैं जिनके उत्पीड़न को स्वर्ण साहित्यकारों और समाज ने त्याग या बलिदान की संज्ञा देकर सवर्णो द्वारा दलितों के शोषण तथा सवर्ण पात्रों के छल को महिमामडित करने का षड्यन्त्र रचा था।"[3]

इसके बाद हिन्दी में तेजी से नाटक व एंकाकी लिखे गए। दलित नाटककारों ने ऐतिहासिक व रामायण–महाभारत तथा पौराणिक कथाओं के उपेक्षित पात्रों को आधार बनाकर नाटकों की रचना की। इसी श्रेणी में हिन्दी दलित नाटकों में एन0 आर0 सागर के 'अन्तिम अवरोध' नाटक की सबसे पहले चर्चा की जा सकती है जिसमें दलित व आदिवासी चरित्रा बभुवाहन का न्यायप्रिय, युद्धविरोधी व कमजोर की सहायता करने वाला तथा महाभारत के पात्रा अर्जून और श्री कृष्ण को छली व कपटी दिखाया गया है। "यह नाटक हिन्दी दलित साहित्य के लिए ही नहीं बल्कि हिन्दी साहित्य के लिए एक उपलब्धि माना जाना चाहिए।"[4] इनके अलावा इनके 'लाजवंती' व 'दूसरा पक्ष' नामक दो अन्य नाटक–संग्रह भी दलित समस्याओं को आधार बनाकर लिखे गए।

दलित नाट्य साहित्य को सबसे अधिक नाटक श्री माताप्रसाद ने दिए है। उनके नाटकों में 'धर्म के नाम पर धोखा' (1977), 'अछूत का बेटा' (1990) 'वीरागंना झलकारी बाई' (1995), 'तड़प मुक्ति की' (1999), वीरांगना ऊदादेवी पासी (1999), 'प्रतिशोध' (1999), 'अंतहीन बेड़ियाँ' तथा 'धर्म परिवर्तन' (2000) आदि है।

'अछूत का बेटा' नाटक में दहेज की बुराई को दूर करने के लिए और समाज में सद्भाव लाने के लिए अन्तर्जातीय विवाह का समर्थन किया है। 'धर्म के नाम पर धोखा' में पाखण्ड को धर्म मानकर गरीब व अनपढ़ दलित समाज के आर्थिक शोषण को दर्शाया है।

ऐतिहासिक नाटकों की परम्परा में माताप्रसाद का 'अन्तहीन बेडियाँ' नाटक बहुत महत्वपूर्ण है। यह कई नाटकों को संयुक्त कर प्रस्तुत किया गया है जिसमें कुछ एकांकी नाटक है। इस नाटक में राहुल सांस्कृत्यायन की 'वोल्गा से गंगा' की शैली में 2000 ई0 पूर्व से आज तक की भारत की सामाजिक और धार्मिक स्थिति को प्रदर्शित किया गया है। इसमें लेखक ने उन घटनाओं और पात्रों को दर्शाया है जिनका सम्बंध वर्ण, जाति, छुआछूत भेदभाव आदि से रहा है। नाटक में ऐतिहासिक घटनाओं को आधार बनाकर मानवीय मूल्यों को नये तरीके से व्याख्यायित करने का प्रयास किया है। नाटक के प्रथम अंक के आठवें दृश्य में शम्बूक द्वारा शिक्षा ग्रहण करने व तपस्या करने पर अयोध्या के राजा श्री रामचंद्र द्वारा उसकी हत्या किए जाने का दृश्य है। श्री रामचन्द्र कहते है –

"तू शूद्र होकर अब अपनी सीमा से आगे बढ़ रहा है। तू मेरे कार्यों की आलोचना करने वाला कौन है? धर्मशास्त्रों में शूद्रों द्वारा उपदेश देना, शिक्षा देना वर्जित है। मैं धर्मशास्त्र के विरुद्ध कैसे काम करूँ? शास्त्रों के निर्माता और व्याख्याकार तो यही हैं। मैं भी इसी सीमा से बँधा हूँ। इसलिए इस अपराध के बदले तुम्हें मृत्यु दण्ड देना ही उचित है।"[5] इस प्रकार लेखक ने श्रेष्ठ कही जानी वाली भारतीय सभ्यता व संस्कृति में श्री रामचंद्र द्वारा शूद्र शम्बूक का वध किये जाने की घटना का अत्यन्त मार्मिक वर्णन किया है। नाटककार ने अन्य स्थान पर शम्बूक से कहलवाया है–

"मेरा वध आप कर सकते हैं, लेकिन इतिहास आपको क्षमा नहीं करेगा। आपके इस कृत्य पर हमेशा उँगली उठती रहेगी।"[6] लेखक ने इस वक्तव्य के माध्यम से आधुनिक दलित चेतना की ओर इशारा किया है। जिसमें वर्तमान में दलित विमर्श की एक लहर उठ खड़ी हुई है। नाटककार नाटक में प्राचीन इतिहास को उठाते हुए बंगाल के दलित संघर्ष और बाबा साहेब अम्बेडकर के मण्डल कमीशन, छत्रापति साहू, गाँधी, तारा सिंह, बिहारी लाल 'हरित' तथा जवाहर लाल नेहरू से संवाद के माध्यम से आधुनिक काल में हुए दलित संघर्षो को सहज रूप में सामने रखते है। बाद में वे कई गोष्ठियों और समाज तोड़क सम्मेलनों व अन्य कार्यक्रमों में वर्तमान के दलित लेखकों और मित्रों के आपसी संवाद से भी दलित आंदोलन और बाबा साहब अम्बेडकर की विचारधारा को प्रस्तुत करते हैं।

'धर्म परिवर्तन' नाटक डॉ. अम्बेडकर के जीवन के कुछ पहलुओं या घटनाओं की झांकी प्रस्तुत करता है। जिसमें बाबा साहेब के बौद्ध धर्म ग्रहण करने व धर्म परिवर्तन के विषय में विचार–विमर्श किया गया है।

माताप्रसाद ने 'तड़प मुक्ति की' नाटक में दलितों से सम्बंधित सामाजिक आर्थिक, राजनीतिक व शैक्षणिक समस्याओं को उठाया है। नाटक का मुख्य पात्र मनोज कुमार एक शिक्षित और जागरूक दलित युवक है। जो लखनऊ विश्वविद्यालय का एम0 ए0 का छात्र होने के साथ–साथ वह रामपुर जिले की 'दलित युवक कल्याण समिति' का अध्यक्ष है।

नाटककार ने दलितों को सरकार की तरफ से दी जाने वाली अनुदान राशि को शासन–प्रशासन में बैठे लोग किस तरह हजम कर जाते है और जारी की गई राशि का मात्र 15 प्रतिशत हिस्सा दलितों तक भी नहीं पहुंच पाता, इस सच्चाई को नाटक में उजागर किया गया है। नाट्क के दृश्य चार में इस बात को दीन दयान वाल्मीकि के माध्यम से इस तरह अभिव्यक्त किया गया है–

"स्पेशल कम्पोनेण्ट प्लान में जिले के अधिकारी एजेंसियाँ तय कर देते है। बैंक वालों को सीधे उन्हीं को पैसा देना होता है। एजेंसियाँ पाँच हजार का सामान दस हजार में देती है। इस प्रकार अनुदान की राशि बीच वाले खा जाते हैं। लाभार्थी को केवल कर्ज मिलता है।"[7]

नाटककार ने नाटक में दिखाया है कि दलित जब अपने प्रति जागरूक होकर शोषण के खिलाफ आवाज उठाता है तो सवर्ण समाज द्वारा उसका बहिष्कार किया जाता है। दृश्य तीन में जालिमपुर गांव का दलित अध्यापक जंजाली राम दरोगा के सामने अपनी स्थिति प्रकट करते हुए कहता है –

श्रीमान् जी ! इस गांव में दलितों की पचास घरों की बस्ती है। पहले यह लोग गाँव वालों के मरे पशु उठाते थे। इनकी औरतें शिशुओं का नाल काटती थीं और स्त्रियों की सेवा करती थीं। लेकिन सब जगह जब यह बंद हो गया तो इस गाँव में भी पंचायत करके इसे रोक दिया गया। इसके कारण गाँ के सभी जाति के लोग दलितों के खिलाफ हो गए। इनका दूसरों के खेतों में और रास्तों से निकलना, बैठना बंद कर दिया गया। गाँव की दुकानों से कोई सामान खरीदना या लेन–देन रोक दिया गया। स्कूलों में बच्चों की पढ़ाई रोक दी गई। खेतों की मेड़ों पर से चलना रोक दिया गया।"[8] इस प्रकार सामाजिक बहिष्कर का दंश दलित समाज को किस तरह तिल–तिल कर जीने के लिए मजबूर करता है यह नाट्ककार ने बखूबी दिखाया है।

इसके साथ–साथ नाटककार ने आरक्षण के पक्ष–विपक्ष में भी अपने विचार प्रस्तुत किए है और दलित नेत्री जड़ावती के माध्यम से वर्तमान दलित राजनीति पर भी प्रकाश डाला है।

माता प्रसाद के नाटकों का गम्भीरपूर्वक अध्ययन करने के उपरान्त डॉ0 सिप्रा बैनर्जी ने लिखा है – "नाटककार माताप्रसाद जी अपनी सामाजिक चेतना से प्रेरित हो समाज में व्याप्त बुराइयों को उद्घाटित कर एक ओर जहाँ दर्शकों की रूचि का परिष्कार करते है वहीं दूसरी ओर उन्हें इन समस्याओं से बचने के लिए आगाह भी करते हैं। इसके लिए पहले वे एक वैज्ञानिक की भांति समस्या के तल तक जाते है। उसके कारणों का अन्वेषण करते है। फिर एक दार्शनिक के समान उसके प्रभाव–प्रतिक्रिया पर विचार करते है और अंत में एक समाज सुधारक की तरह उस समस्या का समाधान प्रस्तुत करके ही अपने कर्त्तव्य की इतिश्री करते है। माताप्रसाद जी के नाटक हिन्दी नाट्य साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान बनाने में समर्थ होगें तथा आज की नहीं आने वाला कल भी इन नाटकों को स्वीकृति देगा।"[9]

मोहनदास नैमिशराय के 'हैलो कामरेड' में दलितों से सम्बंधित आर्थिक व राजनीतिक समस्याओं को उठाया है। नाटक की नायिका एक दलित है जो वामपंथी पार्टी की कार्यकर्ता है। पार्टी में उसकी पदोन्नति होने पर सवर्ण कैडर कैसे उससे दुर्व्यवहार कर उसकी इज्जत से खिलवाड़ करता है इसका सटीक चित्राण इस नाटक में किया गया है। नाटक का अन्य पात्र रवि पढ़ा लिखा दलित युवक है जिसकी पत्नी के साथ राजनीतिज्ञों द्वारा यौन शोषण किया जाता है और वह पागल–सा हो जाता है। बिमला के साथ भी जब यहीं होता है तो वह बिमला से कहता है–

"तो इसका मतलब यह हुआ कि तुझे भी आखिर पालिटिक्स के सर्प ने डंक मार दिया। मैं कहता था ना, एक राजनीति का अजगर हम सबको निगल जायेगा। निगल गया, निगल गया।"[10] और अंत में बिमला का भाई अजय बिमला के बलात्कारी अरविन्द की हत्या कर देता है और जेल चला जाता है तथा बिमला के पिता हीरा लाल इस शोक से तड़प–तड़प कर मर जाते है। इस प्रकार एक भरे–पूरे परिवार को राजनीति का अजगर किस तरह लील कर जाता है। यह सब नाटककार ने नाटक में दिखाया है।

दलित उत्पीड़न की व्यथा को मोहनदास नैमिशराय 'हैलो कामरेड' में हीरालाल के वक्तव्य के माध्यम से कुछ इस तरह प्रकट करता है –

"बेटे हिन्दूस्तान की बात ही अजीबो गरीब है। यहाँ लोग साँप–बिल्ली को दूध पिलायेंगे, बंदर की पूजा करेंगे। गाय को माता कहेंगे। और न जाने किस–किस जानवर से अपने रिश्ते कायम करेंगे। एक–एक दलित की छाया, आज भी इन्हें अप्रिय है।"[11]

उच्च वर्ग में सवर्ण मानसिकता किस हद तक भरी हुई है इसका चित्रण नाटक का पात्र अजय बिमला से इन शब्दों में कहता है – "इस देश में हिन्दू धर्म के ठेकेदारों ने ऊँच–नीच की जड़े बहुत अंदर तक जमाई हुई है। कोई बहुत जोरों की आँधी या तुफान ही आएगा, तभी ये जड़े खत्म हो सकती है। लोगों के दिमाग में ठूंस–ठूंस कर भरी गई मानसिकता घुल सकती है।"[12] अतः यहाँ नाट्ककार नाटक के माध्यम से दलित समाज से संघर्ष व चेतना की आवाज को बुलंद करने का आह्वान करते हैं।

इन नाटकों के अतिरिक्त कर्मशील भारती ने 'मान–सम्मान', 'श्रेष्ठ कौन', फाँसी', 'आजादी किसकी', 'मन्दिर प्रवेश' और 'झूठा अहंकार' दलितों की विभिन्न समस्याओं को लेकर नाटक लिखे। डॉ0 एन0 सिंह ने 'कठौती में गंगा' नाटक में संत रविदास का जीवन दर्शाया है।

सूरजपाल चौहान का 'छू नहीं सकता', ओमप्रकाश वाल्मीकि के नाटक 'दो चहेरे' और दो नुक्कड़ नाटक 'खेल जमूरे का', 'ढ़ोल की पोल', बुद्ध शरण हंस के 'बुद्धम् शरणम् गच्छामि', 'दो पंडे' और 'चौराहे पर खड़ी माँ, सुश्री अनीता का नाटक 'मिट्टी रंग बदलेगी' विश्वनाथ 'शीलबोधि' का 'बहुभोज', 'संकल्प', मनोज कुमान केन का 'संवादों के पीछे', आदि नाटक दलित जीवन से सम्बंधित विभिन्न सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक व शैक्षणिक समस्याओं को उजागर करते है। इन नाटकों में कुछ अप्रकाशित नाटक है लेकिन इनका कई बार सफल मंचन किया जा चुका है। अंत में मोहनदास नैमिशराय दलित नाटकों के संदर्भ में टिप्पणी करते है – 'हिन्दी में दलित नाटक नहीं लिखे गए। शोध एवम् देश भर के दौरे के बाद मेरी जानकारी में हिन्दी क्षेत्रा में लगभग पचास नाटकों का होना तय माना गया है। इनमें से अधिकांश नाटकों का मंचन हुआ, कुछ प्रकाशित भी हुए। हिन्दी क्षेत्रा बहुत विस्तृत क्षेत्र है और कुछ साथियों में अध्ययन, शोध तथा उसके संवाद का अभाव है।"[13]

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. माताप्रसाद : दलित साहित्य में प्रमुख विधाएँ, गाजियाबाद, आकाश पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, सं0 2004, पृ0 26
2. माताप्रसाद : दलित साहित्य मे प्रमुख विधाएँ, पृ0 26
3. यथावत्, पृ0 63
4. वाल्मीकि, ओमप्रकाश (सं0) : दलित हस्तक्षेप, दिल्ली, अक्षर शिल्पी, सं0 2008, पृ0 109
5. यथावत्, पृ0 110
6. माताप्रसाद : अंतहीन बेड़ियाँ, दिल्ली, सूरज प्रकाशन, सं0 2008, पृ0 40
7. यथावत्, पृ0 40
8. माताप्रसाद : तड़प मुक्ति की, दिल्ली, सागर प्रकाशन, सं0 2008, पृ0 47
9. यथावत्, पृ0 25
10. माताप्रसाद : दलित साहित्य में प्रमुख विधाएँ, पृ0 55
11. नैमिशराय, मोहनदास : हैलो कामरेड, दिल्ली, सबस्व फाउंडेशन, सं0 2001, पृ0 64
12. यथावत्, पृ0 48
13. यथावत्, पृ0 47
14. यथावत्, नाटक की भूमिका स